पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में
2019 का सिविल रिट क्षेत्राधिकार मामला संख्या 12199

==========

उमा शंकर राम, पुत्र- श्री अयोध्या राम, निवासी-ग्राम- बाल्थी नरहर, थाना साहेबगंज, जिला-मुज़फ़्फ़रपुर।

----------याचिकाकर्ता

बनाम

1. बिहार राज्य
2. प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना
3. संयुक्त सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना
4. अवर सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना

----------प्रतिवादीगण

==========

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं के लिए : श्री चित्तरंजन सिन्हा, वरीय अधिवक्ता
श्री शैलेश कुमार शर्मा, अधिवक्ता

राज्य के लिए : श्री नदीम सेराज, जीपी-5

==========

अधिनियम/धारा/नियम:

- *भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(i)(e).*
- *बिहार सरकारी सेवक (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, 2005 के नियम 17(3)(4)(5)(14)*

संदर्भित मामले:

- *उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा [(2010) 2 एससीसी 772]*
- *रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक और अन्य [(2009) 2 एससीसी 570]*
- *कुमार उपेन्द्र सिंह परिमार बनाम बी.एस. सहयोजित। भूमि देव. बैंक लिमिटेड और अन्य [2000(3) पीएलजेआर 10]*
- *ए. सावरियार बनाम सचिव तमिलनाडु लोक सेवा आयोग [(2013) एलआईसी 1680/ (2013 एससीसी ऑनलाइन एससी 157]*

- *नरेंद्र कुमार धीरज बनाम बिहार राज्य और अन्य [(2024) 4 बीएलजे 415]*
- *एम.वी. बिजलानी बनाम भारत संघ (2006) 5 एससीसी 88)*
- *चंद्रमा तिवारी बनाम भारत संघ [1987 (सप्ल) एससीसी 518/एआईआर 1988 एससी 117]*

याचिका- *याचिका दायर की गई है, जिसमें बिहार सरकार के सामान्य प्रशासन विभाग के उस प्रस्ताव को रद्द करने की मांग की गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने की सजा दी गई है और यह निर्देश दिया गया है कि वह भविष्य में सरकारी नौकरी के लिए अयोग्य होंगे। याचिकाकर्ता ने उस आदेश को भी चुनौती दी है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ दायर की गई याचिका को अस्वीकृत कर दिया गया था।*

याचिकाकर्ता बिहार प्रशासनिक सेवा के सदस्य थे। उनके खिलाफ बिहार सरकार की आर्थिक अपराध इकाई द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(e) के तहत एफआईआर दर्ज की गई थी, जिसमें आरोप था कि उन्होंने अपनी ज्ञात आय के स्रोतों से अधिक संपत्ति जमा की थी।

निर्णय - *संचालन अधिकारी और प्रस्तुत अधिकारी द्वारा की गई विनती के बावजूद, जब आवश्यक दस्तावेज़ आर्थिक अपराध इकाई द्वारा प्रदान नहीं किए गए थे, तो जांच अधिकारी ने दुर्भाग्यवश अपनी राय बदली और यह देखा कि ये दस्तावेज़ आपराधिक मामले से संबंधित हैं और आरोपों के सही स्पष्टीकरण के लिए आवश्यक भी नहीं हैं, इस कोर्ट के अनुसार, यह निर्णय दोषपूर्ण है। (पैरा 25)*

याचिकाकर्ता द्वारा जमा की गई संपत्तियों/सम्पत्तियों के बारे में कोई चर्चा या विशेष विवरण नहीं दिया गया है, जो उनकी ज्ञात आय के स्रोतों के अनुपात में अनुपयुक्त हैं, और इसके प्रमाण भी नहीं प्रस्तुत किए गए हैं। न ही उन पत्रों के लेखक, जिन्हें आरोप पत्र में दस्तावेज़ी साक्ष्य के रूप में रखा गया है, की परीक्षा ली गई है और न ही कोई सामग्री रिकॉर्ड पर रखी गई है, जिससे आरोप सिद्ध हो सकें। इस प्रकार, आरोपित आदेश संक्षिप्त और अविवेकपूर्ण हैं, और मानसिक प्रयास की अनुपस्थिति का शिकार हैं। इसके अतिरिक्त, आरोपित आदेशों में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव को भी ध्यान में नहीं रखा गया। (पैरा 26)

उत्तरदाताओं को निर्देशित किया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को सेवा में पुनः बहाल करें, साथ ही उसकी सेवा में निरंतरता बनाए रखें। हालांकि, आरोपित आदेशों को रद्द करने से यह उत्तरदाताओं को यह अधिकार नहीं मिलेगा कि वे 2005 के नियमों के अनुसार एक नया विभागीय कार्यवाही शुरू करें, यदि वे उचित समझें। (पैरा 28)

याचिका मंजूर की जाती है। (पैरा 29)

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री हरीश कुमार

सी. ए. भी. निर्णय

तिथि - 07-01-2025

इस अदालत ने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री शैलेश कुमार शर्मा और राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्री नदीम सिराज के साथ विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री चित्तरंजन सिन्हा को सुना है।

2. याचिकाकर्ता सामान्य प्रशासन विभाग, बिहार सरकार, पटना के संकल्प से व्यथित है, जैसा कि ज्ञापन संख्या 6626 दिनांक 01.06.2017 में निहित है, जिसके तहत उसे एक और निर्देश के साथ अपनी सेवा से बर्खास्तगी की सजा दी गई है कि वह सरकार में भविष्य में नियुक्ति के लिए पात्र नहीं होगा। याचिकाकर्ता ने ज्ञापांक संख्या 4334 दिनांक 03.04.2018 में निहित आदेश को भी चुनौती दी है, जिसके तहत याचिकाकर्ता द्वारा बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ प्रस्तुत आवेदन को खारिज कर दिया गया था।

3. अभिलेख (ओं) पर उपलब्ध जानकारीयो से उभरने वाले तथ्यों का सारांश नीचे दिया गया हैः

(i) याचिकाकर्ता बिहार प्रशासनिक सेवा का सदस्य था और जब वह पूर्वी चंपारण जिला, मोतिहारी में निदेशक राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम (जिला ग्रामीण विकास प्राधिकरण) के पद पर तैनात था, तब उसके खिलाफ बिहार सरकार की आर्थिक अपराध इकाई द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (i) (e) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए 2013 की ई. ओ. यू. थाना मामला संख्या 31 के साथ आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति अर्जित करने के कथित आरोपों के लिए एक प्राथमिकी दर्ज की गई थी। छापेमारी

के दौरान, याचिकाकर्ता की आय के ज्ञात कानूनी स्रोतों से अधिक रु. 1,27,60,662/- (एक करोड़ सत्ताईस लाख साठ हजार छह सौ बासठ) की संपत्ति पाई गई है। आर्थिक अपराध इकाई के महानिरीक्षक ने एफ. आई. आर. के नवाचार पर, पत्र संख्या 468 दिनांक 18.07.2013 के माध्यम से सामान्य प्रशासन विभाग को सूचित किया। इसके अनुसार, याचिकाकर्ता को ज्ञापांक संख्या 12560 दिनांक 29.07.2013 में निहित आदेश द्वारा निलंबन के अधीन रखा गया था। बिहार सरकार ने सामान्य प्रशासन विभाग में ज्ञापन संख्या 4244 दिनांक 28.03.2014 में निहित अपने प्रावधानो के माध्यम से याचिकाकर्ता के खिलाफ बिहार सरकारी कर्मचारी (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 2005 (इसके बाद 'नियम, 2005' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों के तहत विभागीय कार्यवाही शुरू करने का निर्णय लिया।

(ii) पूर्व-उल्लिखित पत्र द्वारा, आयुक्त, तिरहुत विभाग, मुज़फ़्फ़रपुर को संचालन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था, जबकि एक वरिष्ठ अधिकारी को जिलाधीश, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी द्वारा विधिवत प्रस्तुत अधिकारी के रूप में नामित किया गया था। आरोप पत्र (प्रपत्र-के) वाले पूर्व-उल्लिखित पत्र के साथ याचिकाकर्ता को अपने बचाव के साथ संचालन अधिकारी के समक्ष उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के निर्देश के साथ विधिवत सेवा प्रदान की गई थी। तदनुसार, याचिकाकर्ता संचालन अधिकारी के समक्ष पेश हुआ और नियम, 2005 के नियम 17 (4) के संदर्भ में आवश्यक दस्तावेजों की आपूर्ति करने के अनुरोध के साथ अपना आवेदन प्रस्तुत किया, जिससे वह अपना प्रभावी बचाव बयान प्रस्तुत कर सके।

(iii) आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध कराने के अनुरोध के बावजूद, जब कुछ नहीं किया गया है, तो याचिकाकर्ता ने अनुस्मारक दाखिल किए। याचिकाकर्ता के आवेदन/अनुस्मारक प्राप्त होने पर, संचालन अधिकारी ने प्रस्तुतकर्ता अधिकारी को याचिकाकर्ता को आवश्यक प्रासंगिक दस्तावेज प्रदान करने का निर्देश दिया। इसके अनुसरण में, अतिरिक्त समाहर्ता,

पूर्वी चंपारण, मोतिहारी के साथ-साथ जिला न्यायधीश, पूर्वी चंपारण, मोतिहारी ने विभिन्न पत्रों के माध्यम से, जिनकी प्रतियां अनुलग्नक-5 श्रृंखला के रूप में रिकॉर्ड में रखी गई हैं, आर्थिक अपराध इकाई से याचिकाकर्ता को आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध कराने का अनुरोध किया। इस बीच, ज्ञापन संख्या 15895 दिनांक 20.11.2016 में निहित सामान्य प्रशासन विभाग के प्रस्ताव द्वारा याचिकाकर्ता का निलंबन रद्द कर दिया गया।

(iv) यह याचिकाकर्ता का स्वीकृत मामला है कि उसके सभी सर्वोत्तम प्रयासों और संचालन अधिकारी के साथ-साथ प्रस्तुतकर्ता अधिकारी द्वारा आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध कराने के निर्देश के बावजूद, याचिकाकर्ता को इसकी आपूर्ति नहीं की जा सकी। हालांकि, इस तथ्य को नजरअंदाज करते हुए, संचालन अधिकारी जांच में आगे बढ़े और अपने पत्र संख्या 841 दिनांक 02.03.2015 के माध्यम से जांच प्रतिवेदन प्रस्तुत की। जाँच रिपोर्ट की प्राप्ति पर, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने अपने पत्र संख्या 30 दिनांक 25.08.2015 के माध्यम से याचिकाकर्ता को जाँच रिपोर्ट को संलग्न करके कारण बताओ नोटिस जारी किया और उसे दो हफ्तो के भीतर अपना लिखित बयान प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने तुरंत एक स्पष्ट दावे के साथ अपना जवाब प्रस्तुत किया कि आज तक उन्हें आवश्यक दस्तावेज प्रदान नहीं किए गए हैं, जिसके बिना वह उचित जवाब देने में असमर्थ हैं। हालाँकि, उन्होंने अपने खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों से इनकार किया और दलील का समर्थन करने के लिए, इस न्यायालय के साथ-साथ सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न फैसलों को इसमें संलग्न किया गया है। याचिकाकर्ता ने विभिन्न अन्य दलीलों के साथ एफ. आई. आर. की विनियमन कि वैधानिक्ता पर सवाल उठाते हुए, अपने पत्र संख्या 30 दिनांक 26.02.2016 के माध्यम से एक पूरक स्पष्टीकरण भी प्रस्तुत किया, जिसमें उसके पिता द्वारा स्वामित्व मुकदमे में सक्षम अदालत के माध्यम से प्राप्त संपत्तियों को सूची में शामिल किया गया है; संपत्तियों की लागत में महत्वपूर्ण वृद्धि देखी गई है और संपत्तियों के मूल्यांकन के आधार का खुलासा नहीं किया गया है। यह भी निवेदन किया

जाता है कि मामले की जांच चल रही है और आरोप पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया है, इसलिए आपराधिक मामले के समापन तक विभागीय कार्यवाही पर रोक लगा दी जाए।

(v) अंत में, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने जांच रिपोर्ट और याचिकाकर्ता के स्पष्टीकरण पर विचार करने के बाद याचिकाकर्ता को उसकी सेवाओं से बर्खास्त करने का निर्णय लिया और तदनुसार, बिहार लोक सेवा आयोग से एक राय मांगी गई।

(vi) राय प्राप्त होने पर, संकल्प मंत्रिमंडल को भेजा गया और उचित मंजूरी मिलने के बाद, बर्खास्तगी का विवादित आदेश बिहार राज्य के माननीय राज्यपाल के आदेश द्वारा पारित किया गया, जैसा कि ज्ञापन संख्या 6626 दिनांक 01.06.2017 में नीहित है।

(vii) याचिकाकर्ता ने असंतुष्ट और व्यथित होने के कारण, नियम, 2005 के नियम 24 (2) के प्रावधानों के तहत एक समीक्षा आवेदन को प्राथमिकता दी, जिसे अंततः ज्ञापन संख्या 4334 दिनांक 03.04.2018 के माध्यम से खारिज कर दिया गया। अनुशासनात्मक प्राधिकरण के साथ-साथ समीक्षा प्राधिकरण के दोनों आदेशों को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जाती है।

4. याचिकाकर्ता का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री चित्तरंजन सिन्हा ने मुख्य रूप से तर्क दिया कि प्राथमिकी में लगाए गए आरोप के आधार पर विभागीय कार्यवाही की शुरुआत ही विभिन्न दुर्बलताओं से ग्रस्त है, क्योंकि नियम, 2005 के नियम 17 (3) (4) और (5) को पूरी तरह से मंजूरी दे दी गई है। आरोप पत्र में गवाहों की सूची और कोई अन्य दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है, सिवाय एफ. आई. आर. और पुलिस अधीक्षक द्वारा सामान्य प्रशासन विभाग को दी गई जानकारी के। याचिकाकर्ता द्वारा लिखे गए विभिन्न पत्रों/आवेदनों की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए, वरीय अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि याचिकाकर्ता के बार-बार अनुरोध पर भी उन्हें आवश्यक दस्तावेजों में से कोई भी सौपा नहीं गया था, जिसकी प्रतियां अनुलग्नक-5 श्रृंखला के रूप में चिह्नित हैं। संचालन अधिकारी के साथ-साथ प्रस्तुतकर्ता अधिकारी ने

बार-बार आर्थिक अपराध इकाई को याचिकाकर्ता को उचित उत्तर दाखिल करने में सक्षम बनाने के लिए दस्तावेज/कागजात उपलब्ध कराने का निर्देश दिया; किंतु, आश्चर्यजनक रूप से, बल्कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि आवश्यक कागजात/दस्तावेज प्रदान किए बिना, संचालन अधिकारी ने अपने दिनांक 12.11.2014 (अनुलग्नक-7 श्रृंखला) के आदेश के माध्यम से अचानक 'यू' टर्न ले लिया है और अपने आदेश में अभिलेखित किया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि संभवतः आवश्यक कागजात प्रस्तुतकर्ता अधिकारी/विभाग के पास उपलब्ध नहीं हैं और इसलिए, याचिकाकर्ता को अपना लिखित कथन/बचाव जवाब प्रस्तुत करने का अंतिम अवसर दिया गया है। जाँच अधिकारी ने यह भी चिन्हित किया कि याचिकाकर्ता द्वारा मांगे गए दस्तावेज़ एक आपराधिक मामले से संबंधित हैं, जो न तो विभाग के पास उपलब्ध है और न ही इसे याचिकाकर्ता के पास उपलब्ध कराने की आवश्यकता है और अंत में *एक तरफा* आगे बढ़े और अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने स्पष्ट रूप से तर्क दिया है कि याचिकाकर्ता को कभी भी अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने का उचित अवसर नहीं दिया और वास्तव में, याचिकाकर्ता के स्पष्टीकरण के अभाव में जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है। पूछताछ अधिकारी का आचरण कानून के तय किए गए वचनो की पूरी तरह से अवहेलना है जैसा कि **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा [(2010) 2 एस. सी. सी. 772]** के मामले में अभिनिर्धारित है। **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक और अन्य (2009) 2 एस. सी. सी. 570)** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भी काफी निर्भरता रखी गयी है।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया है कि हालांकि प्रस्तुतकर्ता अधिकारी को नियुक्त किया गया था, लेकिन प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की कोई राय नहीं है या इस बारे में कोई चर्चा नहीं है कि आरोपों के प्रमाण के निष्कर्ष पर आने के लिए पूछताछ अधिकारी के पास पहुंचने के लिए उनके द्वारा कौन सा दस्तावेज/साक्ष्य

प्रस्तुत किया गया था। याचिकाकर्ता इस बात से पूरी तरह इनकार करता है कि किसी भी समय, उसकी प्रस्तुति दर्ज की गई है; इस तथ्य के बावजूद कि पूछताछ अधिकारी ने दर्ज किया है कि उसकी मौखिक प्रस्तुतियाँ अभिलेखित की गई हैं, जो तथ्यात्मक रूप से गलत है।

7. यह भी तर्क दिया जाता है कि सम्पत्ति का सटीक विवरण दिखाने के लिए विभागीय जांच के दौरान प्रस्तुतकर्ता अधिकारी/विभाग द्वारा कोई सबूत प्रस्तुत नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता और उसके रिश्तेदार (ओं) द्वारा अर्जित की गई संपत्ति और साथ ही साथ उसी का बाजार मूल्य दिखाती है, इसलिए, आरोपों को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं होने के कारण, विशेष रूप से अभिलेख पर सामग्री को ध्यान में रखते हुए, जांच अधिकारी का निष्कर्ष न तो किसी साक्ष्य पर आधारित है और न ही किसी ऐसी सामग्री पर आधारित है जो याचिकाकर्ता के खिलाफ पाई गई है, विकृत और अलग रखने योग्य है।

8. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वरीय अधिवक्ता ने अंत में तर्क दिया कि सजा का आदेश कानून में बुरा है, क्योंकि यह केवल याचिकाकर्ता के खिलाफ दर्ज प्राथमिकी पर निर्भर करता है; इसके अलावा, याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित आय से अधिक परिसंपत्ति को दर्ज करने वाली जांच एजेंसी का कोई फैसला नहीं है। मौखिक साक्ष्य द्वारा एफ. आई. आर. की विषयवस्तु के सिद्ध होने के अभाव में, इसे इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक वैध साक्ष्य सबूत नहीं कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध हुए हैं। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया जाता है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों को सिद्ध करने के लिए प्रतिवादि द्वारा किसी भी मूल्य पर भरोसा करने का कोई साक्ष्य नहीं है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत से अधिक है। सजा का विवादित आदेश और कुछ नहीं बल्कि केवल तथ्यों का वर्णन है जैसा कि एफ. आई. आर. में खुलासा किया गया है। हालाँकि, यह इस बात से संबंधित नहीं है कि आरोप कैसे सिद्ध होते हैं और न ही

इसमें 2019 के किसी विशिष्ट परिसंपत्ति/संपत्ति का उल्लेख है। याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित परिसंपत्तियों/संपत्तियों के बारे में विवरण, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके प्रमाण से असमान है। इसलिए, यह किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, इसके अलावा यह एक गुप्त क्रम है जो मन के उचित अनुप्रयोग को दर्शाता नहीं है। बर्खास्तगी की सजा देने के लिए इसमें कोई ठोस और स्पष्ट कारण नहीं दिए गए हैं और इस प्रकार यह कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है। **कुमार उपेन्द्र सिंह परिमार बनाम बी. एस. को-ऑप्ट लैंड देव बैंक लिमिटेड और अन्य [2000 (3) पी. एल. जे. आर. 10], ए. सावरियार बनाम सचिव तमिलनाडु लोक सेवा आयोग [(2013) एल. आई. सी. 1680/(2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 157]** और **नरेंद्र कुमार धीरज बनाम बिहार राज्य और अन्य [(2024) 4 बी. एल. जे. 415]।** के मामलों में भी इस अदालत के फैसले पर निर्भरता किया गया है।

9. *इसके विपरीत,* राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार ढंग से तर्क दिया कि याचिकाकर्ता ने एक लोक सेवक के रूप में अपने पद का दुरुपयोग करके भारी संपत्ति अर्जित की, जो कथित रूप से उसकी आय के ज्ञात स्रोतों से असमान पाई गई है, जिसके कारण 2013 का ई. ओ. यू. थाना कांड संख्या 31 वाली प्राथमिकी दर्ज की गई है। याचिकाकर्ता को आरोप पत्र विधिवत दिया गया है और याचिकाकर्ता को सुनवाई का उचित अवसर देने के बाद, संचालन अधिकारी ने याचिकाकर्ता के खिलाफ सभी आरोप सिद्ध पाए हैं, जो स्पष्ट रूप से है। यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता ने अपनी संपत्ति की वापसी की घोषणा की तुलना में अधिक संपत्ति अर्जित की है। दूसरा कारण बताओ नोटिस याचिकाकर्ता को दिया गया था और उसके जवाब में, उसने अपना लिखित बयान प्रस्तुत किया और सावधानीपूर्वक जांच के बाद, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने याचिकाकर्ता की सेवाओं को इस सख्ती के साथ खारिज करने का फैसला किया है कि उसे भविष्य में किसी भी सरकारी नौकरी में नियुक्त नहीं किया जाएगा। अनुशासनात्मक प्राधिकरण के

निर्णय को बिहार लोक सेवा आयोग के साथ-साथ मंत्रिमंडल ने भी मंजूरी दे दी है। याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत समीक्षा को भी खारिज कर दिया गया। अब, याचिकाकर्ता को साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, क्योंकि यह बर्खास्तगी के विवादित आदेश के खिलाफ अपील दायर करने के बराबर होगा। अंत में यह तर्क दिया जाता है कि विवादित आदेश अच्छी तरह से तर्कपूर्ण हैं, जो विवेक के उचित प्रयोग पर और याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए बचाव पर विचार करने के बाद पारित किए गए हैं; कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता नहीं है और इस तरह, किसी भी योग्यता से रहित रिट याचिका खारिज होने के योग्य है।

10. इस न्यायालय ने पक्षों की ओर से पेश की गई दलीलों को उत्सुकता से सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का सावधानीपूर्वक अध्ययन किया है।

11. इस मामले से अलग होने से पहले, यह उचित होगा और 2019 का पटना उच्च न्यायालय सी. डब्ल्यू. जे. सी. नियम, 2005 के अनिवार्य अनुदेशों को उजागर करना उचित और उपयुक्त होगा, जिनका विभागीय जांच/कार्यवाही में पालन किया जाना आवश्यक है।

12. नियम, 2005 का नियम 17 बड़े दंड लगाने की प्रक्रिया निर्धारित करता है। नियम 17 (1) और (2) अनुशासनात्मक प्राधिकरण को बाध्य करते हैं कि नियम 14 में निर्दिष्ट किसी भी दंड को लागू करने का कोई भी आदेश इन नियमों में प्रदान किए गए तरीके से जांच किए बिना नहीं किया जाएगा। यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी की राय है कि किसी सरकारी कर्मचारी के खिलाफ कदाचार या दुर्व्यवहार के किसी भी आरोप की सच्चाई के बारे में पूछताछ करने के लिए आधार हैं, तो वह स्वयं इसकी जांच कर सकता है, या इन नियमों के तहत इसकी सच्चाई के बारे में जाँच करने के लिए एक प्राधिकरण नियुक्त कर सकता है। नियम 17 (3) आगे निर्देश देता है कि इस नियम के तहत एक सरकारी कर्मचारी के खिलाफ जांच करने के लिए, अनुशासनात्मक प्राधिकरण प्रत्येक

आरोप के समर्थन में एक निश्चित और विशिष्ट आरोप के रूप में दुराचार या दुर्व्यवहार के आरोप के सार को तैयार करेगा या तैयार करवायेगा। आरोप पत्र में ऐसे दस्तावेजों की एक सूची होगी जिसके द्वारा और ऐसे गवाहों की एक सूची होगी जिनके द्वारा आरोप के लेखों को बनाए रखने का प्रस्ताव है। कदाचार या दुर्व्यवहार के आरोप के बयान के साथ आरोप पत्र की एक प्रति और दस्तावेजों की सूची और गवहो कि सूची गवाहों को सरकारी कर्मचारी को उनके बचाव का लिखित बयान प्रस्तुत करने के निर्देश के साथ सौंपा जाएगा। जाँच प्रस्तुत वाले प्राधिकारी पर यह कर्तव्य भी लगाया गया है कि वह अपराधी को आवश्यक दस्तावेज प्रस्तुत करे बशर्ते कि जांच प्रस्तुत वाला प्राधिकारी, उसके द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से, ऐसे दस्तावेजों की मांग करने से इनकार कर सके जो उसकी राय में मामले के लिए प्रासंगिक नहीं हैं।

13. नियम, 2005 के नियम 17 (14) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जांच के लिए निर्धारित तिथि पर, मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य जिसके द्वारा आरोप के लेखों को सिद्ध करने का प्रस्ताव किया गया है, अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा या उसकी ओर से प्रस्तुत किया जाएगा। प्रस्तुतकर्ता अधिकारी द्वारा या उनकी ओर से गवाहों से पूछताछ की जाएगी और सरकारी कर्मचारी द्वारा या उनकी ओर से उनसे प्रतिपरीक्षा जिरह की जा सकती है। प्रस्तुतकर्ता अधिकारी को उन किसी भी बिंदु पर गवाहों से पुनःपरीक्षण फिर से पूछताछ करने का अधिकार होगा, जिन पर उनसे प्रतिपरीक्षा जिरह की गई है, लेकिन किसी नए मामले पर नहीं, पूछताछ करने वाले प्राधिकारी की अनुमति के बिना पूछताछ करने वाला प्राधिकारी भी गवाहों से ऐसे सवाल कर सकता है, जो वह उचित समझे।

14. हाथ में मामले पर आते हुए, यह माना जाता है कि आरोप पत्र में गवाहों की सूची नहीं है। जहाँ तक दस्तावेजी साक्ष्यों का संबंध है, केवल दो दस्तावेज आरोप के लेख को सिद्ध करने के लिए प्रस्तुत किया गया है अर्थात पत्र सं 468 दिनांक 18.07.2013, जो पुलिस महानिरीक्षक, आर्थिक अपराध इकाई द्वारा प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग

को दी गई जानकारी है कि छापे के दौरान, याचिकाकर्ता के खिलाफ आय से अधिक संपत्ति जमा करने के ठोस साक्ष्य पाए गए हैं। दूसरा दस्तावेजी साक्ष्य पुलिस अधीक्षक, आर्थिक अपराध इकाई द्वारा प्रधान सचिव, सामान्य प्रशासन विभाग को जारी किया गया पत्र है, जिसमें उन्हें याचिकाकर्ता द्वारा अपने नाम और अपने रिश्तेदार(ओं) के नाम पर असमान रूप से एकत्र की गई संपत्तियों का विवरण दिया गया है, जिसमें वित्तीय वर्ष में याचिकाकर्ता द्वारा की गई संपत्ति और देनदारियों की घोषणा की गई है।

15. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि केवल एक दस्तावेज़ का उत्पादन प्रस्तुतीकरन पर्याप्त नहीं है। दस्तावेजी साक्ष्य की सामग्री को गवाहों से पूछताछ करके सिद्ध करना होता है।

16. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि विभागीय कार्यवाही में आरोपों को आपराधिक मामले के रूप में सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है, यानी सभी उचित संदेह से परे, यह इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकता है कि पूछताछ अधिकारी एक अर्ध न्यायिक कार्य करता है, जो दस्तावेजों का विश्लेषण करने पर इस निष्कर्ष पर पहुँचें कि अभिलेख पर सामग्री के आधार पर आरोपों को सिद्ध करने की संभावना बहुत अधिक थी। ऐसा करते समय, वह किसी भी अप्रासंगिक तथ्य को ध्यान में नहीं रख सकता है। वह प्रासंगिक तथ्य पर विचार करने से इनकार नहीं कर सकता। वह केवल अनुमानो और संदेहो के आधार पर साक्ष्य के बोझ को स्थानांतरित नहीं कर सकता है और केवल अनुमानों के आधार पर गवाहों की प्रासंगिक गवाही को अस्वीकार नहीं कर सकता है और अनुमान **[एम. वी. बिजलानी बनाम भारत संघ (2006) 5 एस. सी. सी. 88 के माध्यम से]।**

17. **रूप सिंह नेगी** (उपरोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसी मुद्दे पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि *"जाँच अधिकारी द्वारा अभियुक्त के विरुद्ध जाँच के दौरान एकत्र किए गए कथित साक्ष्य को अनुशासनात्मक कार्यवाही में साक्ष्य नहीं*

माना जा सकता है। अपराधी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोप सबूतों के आधार पर सिद्ध हुए होने चाहिए।" माननीय अदालत ने यह स्पष्ट कर दिया कि जांच अधिकारी की रिपोर्ट को तब तक कायम नहीं रखा जा सकता यदि जब तक कि यह केवल अनुमानों और अनुमानों पर आधारित न हो। जाँच अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से किसी भी साक्ष्य द्वारा समर्थित होने चाहिए। संदेह, चाहे कितना भी अधिक हो, किसी भी परिस्थिति में कानूनी प्रमाण का विकल्प नहीं माना जा सकता है।

18. उक्त निर्णयों के प्रासंगिक अनुच्छेदो को समाविष्ट करना उक्त मुद्दे की सराहना इस मुद्दे की सराहना के लिए उक्त निर्णय के पैराग्राफः

> "14. निर्विवादितद रूप से, विभागीय कार्यवाही एक अर्ध-न्यायिक कार्यवाही है। अनुसंधान अधिकारी एक अर्ध न्यायिक कार्य करता है। दोषी अधिकारी के खिलाफ लगाए गए आरोप सिद्ध होने चाहिए। अनुसंधान अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्री को ध्यान में रखते हुए किसी निष्कर्ष पर पहुंचे। अनुसंधान अधिकारी द्वारा सभी अभियुक्तों के विरुद्ध जाँच के दौरान एकत्र किए गए कथित साक्ष्य को अनुशासनात्मक कार्यवाही में साक्ष्य नहीं माना जा सकता। उक्त दस्तावेजों को सिद्ध करने के लिए किसी गवाह से पूछताछ नहीं की गई। प्रबंधन के गवाहों ने केवल दस्तावेजों को प्रस्तुत किया और इसकी सामग्री को सिद्ध नहीं किया। अन्य बातों के साथ-साथ अब तक, जाँच अधिकारी द्वारा प्राथमिकी को आधार बनाया गया जिसे साक्ष्य के रूप में नहीं माना जा सकता था।
>
> 23. इसके अलावा, अनुशासनात्मक प्राधिकरण और अपीलीय प्राधिकरण के आदेश का किसी भी कारण से समर्थन नहीं किया जाता है। चूंकि उनके द्वारा पारित आदेशों के गंभीर नागरिक परिणाम होते हैं, इसलिए उचित कारण निर्धारित किए जाने चाहिए थे। यदि जांच अधिकारी ने अपीलार्थी द्वारा

की गई स्वीकारोक्ति पर भरोसा किया था, तो इसका कोई कारण नहीं था कि आपराधिक न्यायालय द्वारा स्वयं के साक्ष्य के आधार पर पारित आरोपमुक्त करने के आदेश पर क्यो विचार क्यों नहीं किया जाना चाहिए था। दोष को इंगित करने वाली रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री दोष को इंगित करना सिद्ध करने की आवश्यकता है। निर्णय कुछ सबूतों पर लिया जाना चाहिए, जो कानूनी रूप से स्वीकार्य है। साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान विभागीय कार्यवाही में लागू नहीं हो सकते हैं लेकिन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत लागू होते हैं। चूँकि जाँच अधिकारी की रिपोर्ट केवल अनुमानों और संदेहो अनुमानों पर आधारित थी, इसलिए इसे कायम नहीं रखा जा सकता था। जांच अधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से किसी भी साक्ष्य से समर्थित नहीं थे। सन्देह, जैसा कि सर्वविदित है, चाहे वह कितना भी अधिक क्यों न हो, किसी भी परिस्थिति में कानूनी प्रमाण का विकल्प नहीं माना जा सकता है।.

19. विभागीय/अनुशासनात्मक प्राधिकरण में अर्ध न्यायिक प्राधिकरण में कार्य करने वाले जांच अधिकारी की भूमिका अच्छी तरह से स्थापित है कि उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकरण का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। उनका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, यहां तक कि अपचारी अपराधी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी यह देखने के लिए कि क्या अप्रमाणित साक्ष्य यह मानने के लिए पर्याप्त है कि आरोप सिद्ध हुए हैं।

20. **सरोज कुमार सिन्हा** (ऊपर) के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने जांच अधिकारी की स्थिति और कर्तव्यों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि कर्मचारी के साथ किसी भी कार्यवाही में निष्पक्ष व्यवहार किया जाना चाहिए, जिसकी परिणति उस पर दंड लगाने में हो सकती है।

21. उक्त निर्णय के प्रासंगिक अनुच्छेदों को पुनः प्रस्तुत करना उपयुक्त और उचित होगा, जो यहां उद्धृत किए गए हैंः

"27. उपरोक्त उप-नियम के अवलोकन मात्र से पता चलता है कि जब प्रतिवादी आरोप पत्र में स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने में विफल रहा था, तो जांच अधिकारी पर जांच में अपनी उपस्थिति के लिए एक तारीख तय करने का दायित्व था। यह केवल उस मामले में होता है जब सरकारी कर्मचारी निर्धारित तिथि के नोटिस के बावजूद उपस्थित होने में विफल रहता है तो जांच अधिकारी एकतरफा जांच के साथ आगे बढ़ सकता है। ऐसी परिस्थितियों में भी आरोप पत्र में उल्लिखित गवाहों के बयान दर्ज करना जांच अधिकारी का दायित्व है। चूँकि सरकारी कर्मचारी अनुपस्थित है, इसलिए वह स्पष्ट रूप से गवाहों के प्रतिपरीक्षण का लाभ खो देगा। लेकिन फिर भी आरोप स्थापित प्रस्तुत करने के लिए विभाग को जांच अधिकारी के समक्ष आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। यह इस आरोप से बचने के लिए है कि जांच अधिकारी ने अभियोजक के साथ-साथ न्यायाधीश के रूप में भी कार्य किया है।

28. अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण में कार्य करने वाला एक जांच अधिकारी एक स्वतंत्रता न्यायनिर्णायक के पद पर होता है। उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकरण/सरकार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। उनका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करना है, यहां तक कि अपराधी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी यह देखने के लिए कि क्या आरोपो को सिद्ध करने के लिए अप्रमाणित साक्ष्य पर्याप्त है मान लीजिए कि आरोप साबित हो गए हैं। वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। चूंकि किसी मौखिक साक्ष्य की जांच नहीं की गई है, इसलिए दस्तावेजों को सिद्ध नही

किया गया है, और इस निष्कर्ष पर विचार नहीं किया जा सकता है कि प्रतीवादी उत्तरदाताओं के खिलाफ आरोप सिद्ध हो गए हैं।

29. उपरोक्त के अलावा, भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के आधार पर विभागीय जांच प्राकृतिक न्याय के नियमों के अनुसार की जानी थी। यह प्राकृतिक न्याय के नियमों की एक बुनियादी आवश्यकता है कि एक कर्मचारी को किसी भी कार्यवाही में सुनवाई का उचित अवसर दिया जाए जो कर्मचारी पर लगाए जाने वाले दंड में समाप्त हो सकता है।

30. जब सरकारी कर्मचारी के खिलाफ विभागीय जांच की जाती है तो इसे आकस्मिक कार्रवाई नहीं माना जा सकता। जाँच की कार्यवाही भी बंद दिमाग से नहीं की जा सकती है। जाँच अधिकारी को पूरी तरह से निष्पक्ष होना चाहिए। प्राकृतिक न्याय के नियमों का पालन करने की आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि न केवल न्याय किया गया है, बल्कि स्पष्ट रूप से किया गया है। प्राकृतिक न्याय के नियमों का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि एक सरकारी कर्मचारी के साथ ऐसी कार्यवाही में निष्पक्ष व्यवहार किया जाए जो बर्खास्तगी/सेवा से हटाने सहित सजा के अधिरोपण में परिणत हो सकती है।

22. अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि शुरू में याचिकाकर्ता के अनुरोध को संचालन अधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया गया है, जिसने बदले में, प्रस्तुतकर्ता अधिकारी को याचिकाकर्ता को आवश्यक अपेक्षित आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध कराने का निर्देश दिया है, जिससे वह एक प्रभावी कारण-दो जवाब दाखिल कर सके।

23. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक दस्तावेज़ को आरोपों का सामना कर रहे अपचारी अपराधी सरकारी कर्मचारी को प्रदान

किया जाना चाहिए, इसके बजाय उसे केवल सामग्री और प्रासंगिक दस्तावेज़ प्रदान करने आवश्यक हैं।

24. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **चंद्रमा तिवारी बनाम भारत संघ (1987 (पूरक) एस. सी. सी. 518/ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 117]** के मामले में स्पष्ट रूप से पूर्व-उल्लिखित प्रस्ताव का अवलोकन किया है और कहा है कि उन दस्तावेजों को अनिवार्य रूप से अपराधी को प्रदान किया जाना चाहिए, जिसके बाद जांच अधिकारी/अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा भरोसा किया गया है।

25. हस्तगत मामले में, संचालन अधिकारी के साथ-साथ प्रस्तुतकर्ता अधिकारी द्वारा किए गए अनुरोध के बावजूद, जब आर्थिक अपराध इकाई द्वारा आवश्यक दस्तावेज प्रदान नहीं किए गए हैं, तो जांच अधिकारी ने दुर्भाग्य से एक परिवर्तन झटका लिया और कहा कि ये दस्तावेज आपराधिक मामले के संबंध में हैं और याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोपों के उचित स्पष्टीकरण के लिए भी आवश्यक नहीं हैं जो इस न्यायालय के विचारकी राय मे, दुर्बलता के दुष्प्रभाव से ग्रस्त है।

26. इस न्यायालय ने बर्खास्तगी के विवादित आदेश और समीक्षा प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश को भी देखा है, जो स्पष्ट रूप से तथ्य के विवरण को दर्शाता है जैसा कि पुलिस अधीक्षक, आर्थिक अपराध इकाई द्वारा खुलासा किया गया है; याचिकाकर्ता द्वारा अर्जित संपत्ति/संपत्तियों के बारे में कोई चर्चा और कोई विशिष्ट विवरण का उल्लेख नहीं है, जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत और उसके प्रमाण से असमान है। आरोप पत्र में दस्तावेजी साक्ष्य के रूप में रखे गए पत्रों के लेखक की न तो इसकी सामग्री को सिद्ध करने के लिए जांच की गई है और न ही सामग्री को रिकॉर्ड में रखा गया है, जिससे आरोप सिद्ध हुए हैं और इस तरह, विवादित आदेशों के अलावा गुप्त और अनुचित होने के अलावा हैं, यह विवेकमन के गैर-आवेदन के दुष्प्रभाव से पीड़ित है। इसके अतिरिक्त, विवादित आदेश

याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव को ध्यान में रखने में भी विफल रहे, जिसकी प्रति रिट याचिका के अनुलग्नक-9 के रूप में चिह्नित है, जो 61 पृष्ठों में चलता है।

27. तथ्यों और परिस्थितियों और ऊपर की गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, ज्ञापन संख्या 6626 दिनांक 01.06.2017 और ज्ञापन संख्या 4334 दिनांक 03.04.2018 में निहित विवादित आदेशों को इसके द्वारा अलग कर दिया जाता है।

28. प्रत्यर्थियों को याचिकाकर्ता को निरंतरता के साथ सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया जाता है। हालाँकि, विवादित आदेशों को दरकिनार करने से प्रतिवादी अधिकारियों को नियम, 2005 के तहत प्रदान किए गए निर्देशों के अनुरूप एक नई विभागीय कार्यवाही शुरू करने से नहीं रोका जा सकेगा, यदि ऐसी सलाह दी जाती है।

29. रिट याचिका स्वीकृत की जाती है।

30. लागत (ओं) से सम्बंधित कोई आदेश नहीं होगा।

(हरीश कुमार, न्यायमूर्ति)

रोहित/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।